M.A. IInd sem

भारत का इतिहास (550 ई. 1200 ई. तक)

डॉ. हेमन्त लोदवाल - 5-5-20

यूनिट - 5. विषय-: सेन राजवंश

सेनवंशी शासकों के पूर्व पुरुषों के मूल स्थान और उत्पत्ति सम्बन्धी उल्लेख विजयसेन के देवपाड़ा अभिलेख एवं लक्ष्मणसेन के माधाइनगर अभिलेख में मिलते है। तदनुसार, वे चन्द्रवंशी थे और उनका प्रारम्भिक पुरुष वीरसेन था, जिस कुल में सामन्तसेन उत्पन्न हुआ। देवपाड़ा अभिलेख के आठवें श्लोक से ज्ञात होता है कि सेनवंश के पूर्व पुरुष मूलत: कर्नाट (आधुनिक पश्चिमी आन्ध्र प्रदेश और मैसूर के उत्तर भाग) के निवासी थे। और वे स्वयं को ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों ही मानते थे।

सेन लोग कर्नाट देश को कब और कैसे आये, इसकी जानकारी प्राप्त नहीं होती। देवपाड़ा अभिलेख में सामन्तसेन के प्रारम्भिक सैन्य कार्यों का क्षेत्र दक्षिण था, किन्तु वृद्धावस्था में उसने उत्तर में गंगा नदी के किनारों के वन्य प्रदेशों में स्थित तीर्थों का भ्रमण किया। किन्तु ~~वल्लाल~~ वल्लालसेन के नैहटी अभिलेख राढ़ा के उत्तरी भागों में एक छोटा सा क्षेत्र अधिकृत कर लिया। उसके प्रयत्नों से उसके पुत्र हेमन्तसेन ने राजसत्ता का उपभोग किया।

विजयसेन - (1095 - 1158 ई.)

हेमन्तसेन के बाद रानी यशोदेवी से उत्पन्न उसका विजयसेन नामक पुत्र गद्दी पर बैठा। दक्षिण राढ़ा में स्थापित शूरवंश की एक राजकुमारी (विलासदेवी) से विवाह कर उसने अपनी सत्ता के विस्तार का प्रयत्न किया। देवपाड़ा, बैरकपुर और पैकोर नामक स्थानों से तीन अभिलेख प्राप्त हुए हैं। रामपाल की मृत्यु के बाद पालों की अवनति का विजयसेन ने अपनी सत्ता पूर्व बंगाल और उत्तरी बंगाल के बड़े भाग पर स्थापित कर ली।

गौड़राज पर विजयसेन की विजय को सर्वाधिक महत्व दिया। देवपाड़ा अभिलेख में ~~गौड़राज~~ कहा गया है कि गौड़राज भयभीत होकर भाग जाने वाला कहा गया है और वह शासक पाल मदनपाल था। उत्तरी बंगाल में पालसत्ता कमजोर होने लगी और सेन सत्ता स्थापित होने लगी। विजयसेन ने वहीं के पद्मसर (नामक तालाब के किनारे प्रद्युम्नेश्वर शिवमन्दिर बनवाया। उसने परमेश्वर, परमभट्टारक, महाराजाधिराज एवं अरिराजवृषभशंकर जैसी उपाधियाँ धारण की थीं।

बख्तियार खलजी का आक्रमण :- 1193 ई. में मगध के बिहार नामक नगर को ध्वस्त कर बख्तियार खलजी जब कुतुबुद्दीन ऐबक के सम्मुख उपस्थित हुआ तो उसे अगला आदेश लखनौती भी जीतने की आज्ञा मिली। मिनहाजुद्दीन ने अपने तबकाते-नासिरी में बख्तियार लखनौती विजय का जो विवरण दिया है उसमें कितनी सत्यता थी कहा जाता है कि बख्तियार ने इतनी तेजी से सेन राज्य पर आक्रमण किया कि उसकी सेना का मुख्य भाग बहुत पीछे छूट गया और लक्ष्मणसेन की राजधानी नदिया पहुंचते-पहुंचते केवल 18 घुड़सवार उसके साथ रह गये। और वह राजदरबार में घुस गया ऐसा उल्लेख किया है। सेन राजदरबार में तुर्कों के नाम से भयभीत हो गये। लक्ष्मणसेन की तुर्क आक्रमण से दुर्गति तो हुई, किन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से उसका समय महत्वपूर्ण था।

मिनहाजुद्दीन उसे बंगाल का बड़ा राजा कहता है और वह कहता है कि लक्ष्मणसेन दानशीलता के लिए प्रसिद्ध था। राजशेखर अपने प्रबन्धकोश में लक्ष्मणसेन की प्रशंसा में कहता है कि वह बड़ा प्रतापी और न्यायी था तथा उसके पास विपुल राज्य और [illegible] [illegible] जयदेव, पवनदूत (धोयी), ब्राह्मण सर्वस्व (हलायुध) और श्रीधरदास जैसे साहित्यकार उसके समय दरबार की शोभा बढ़ाते थे।

लक्ष्मणसेन के उत्तराधिकारी :- नदिया पर 1202 ई. में बख्तियार खलजी के आक्रमण के साथ लक्ष्मणसेन अथवा सेनवंश की समाप्ति नहीं हो पायी थी। उसके बाद भी लम्बे समय तक शासन करते रहे। लक्ष्मणसेन की मृत्यु 1205 ई. में हुई। उसके बाद उसके दो पुत्रों ने शासन किया। जिनमें विश्वरूपसेन और केशवसेन ने दक्षिण और पूर्वी बंगाल पर लगभग 20-25 वर्षों तक शासन किया, जहाँ से इनके तीन अभिलेख प्राप्त हुए हैं। इन अभिलेखों में इन्हें साम्राज्यसूचक विरुद दिये हैं। उनकी उपलब्धी की जानकारी नहीं मिलती। मिनहाजुद्दीन कहता है कि 1260 ई. में जब तबकाते-नासिरी की रचना पूर्ण की तब भी लक्ष्मणसेन के वंशजों का शासन उन प्रदेशों पर स्थापित था।

बल्लालसेन (1159-1179 ई.)

:- सन 1958-59 ई. में विजयसेन की मृत्यु हो गयी और विलासदेवी से उत्पन्न बल्लालसेन पुत्र राज्य का उत्तराधिकारी बना। उसके नैहट्टी अभिलेख में उसके 11 वर्ष शासन करने का उल्लेख मिलता है। बल्लालसेन की सैनिक विजय की जानकारी प्राप्त नहीं होती। उसने गोविन्दपाल को 1162 ई. के आसपास हराकर बिहार पर अधिकार कर लिया। और गौडेश्वर की उपाधि धारण की। माधाइनगर अभिलेख में बताया कि बल्लालसेन ने चालुक्य राजा जगदेकमल्ल II की पुत्री रामदेवी से विवाह किया। बल्लालचरित में उसके राज्य क्षेत्र के बंग, वारेन्द्र, राढ़, बागडी और मिथिला आदि थे। उसने अपने पिता की भाँति परममाहेश्वर, परमभट्टारक, महाराजाधिराज, अरिराजनि:शंकशंकर की उपाधियाँ धारण की। वह शैव धर्म को मानने वाला था उसने दानसागर और अद्भुत सागर नामक ग्रंथो की रचना की। वह एक साहित्यकार भी था।

लक्ष्मणसेन (1179-1205 ई.)

बल्लालसेन ने अपने जीवन के अन्तिम वर्षों मे गद्दी को त्यागकर रानी रामदेवी से उत्पन्न लक्ष्मणसेन को राज्याभिषेक कर दिया। उसके शासनकाल के आठ अभिलेख बंगाल से प्राप्त हुए हैं; जिनमे उसकी विजयों और सांस्कृतिक क्रियाकलापों की जानकारी प्राप्त होती है। उसने अरिराजमर्दनशंकर और गौडेश्वर की उपाधियाँ धारण की तथा उसने शैवधर्म को त्यागकर वैष्णव धर्म को अपना लिया। इसलिये परमवैष्णव की उपाधि भी दी गयी है।

लक्ष्मणसेन की विजयें उसके पुत्र विश्वरूपसेन के मदनपाडा अभिलेख में एक लम्बी विरुदों की सूचि है साथ ही उसे पुरी (भुवनेश्वर) काशी, त्रिवेणी संगम अर्थात प्रयाग में विजयस्तम्भों की स्थापना की। इससे स्पष्ट होता है कि लक्ष्मणसेन महान विजेता था। क्योंकि उसके प्रारम्भिक अभिलेखों में गौड, बंग और राढ़ पर उसके अधिकार की पुष्टि होती है माधाइनगर अभिलेख में उसने गौड, कामरूप, काशी, और कलिंग की विजय की। लक्ष्मणसेन का समकालिक शासक जयचन्द था इन दोनो के अभिलेखिक संघर्ष की पुष्टि राजशेखर कृत प्रबन्धकोश मे बताया है कि जयचन्द ने लक्ष्मणसेन के राज्य पर आक्रमण किया किन्तु उसका कोई परिणाम नही निकला। स्वयं लक्ष्मणसेन के विजयसम्बन्धी उल्लेखों में कोई वर्णन नही मिलता।

धर्मपाल:- (770 ई. 810 ई.) - ने धर्मपाल ने लगभग 40 वर्ष तक शासन किया। गोपाल का पुत्र धर्मपाल था धर्मपाल एक शक्तिशाली एवं महत्वकांक्षी शासक था तथा धर्मपाल ही ही वास्तविक अर्थों मे पालवंश का संस्थापक था। इसके समकालीन शक्तिशाली साम्राज्य अवन्ती के प्रतीहार तथा दक्षिण के राष्ट्रकूटों के साम्राज्य थे। इस कारण धर्मपाल का सम्पूर्ण जीवन युद्धों में बीता।

धर्मपाल का वत्सराज (प्रतीहार) के बीच युद्ध। :- जिस समय बंगाल मे पालवंश का धर्मपाल शासन कर रहा था, तब अवन्ती मे गुर्जर-प्रतीहार नरेश के वत्सराज का शासन था। दोनो ही शासक कन्नौज पर अधिकार करना चाहते थे! दोनो के बीच युद्ध मे वत्सराज की विजय हुई। यह युद्ध किस स्थान पर हुआ इस विषय मे विद्वानों में मतभेद है। यह युद्ध सम्भवत: 785 ई. 786 ई. के मध्य हुआ होगा।

राष्ट्रकूट शासक ध्रुव का आक्रमण:- राष्ट्रकूट शासक ने धर्मपाल पर आक्रमण किया तथा दोआब मे उसे पराजित किया। इसकी पुष्टि बड़ोदा अभिलेख से होती है ध्रुव का यह अभियान सम्भवत: 789 ई.-790 ई. मे हुआ था।

धर्मपाल का उत्तरी अभियान :- ध्रुव के दक्षिण लौट जाने के बाद धर्मपाल ने कन्नौज पर आक्रमण कर अधिकार कर लिया। धर्मपाल के खलीमपुर अभिलेख के अनुसार इसने भोज, मत्स्य, मद्र कुरु, यवन, अवन्ती, गन्धार व कीर पर अधिकार कर लिया। लेकिन इतिहासकारों में इस अभियान की सफलता पर विवाद है। अत: निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि उसने ये विजये की थीं।

पुन: राष्ट्रकूट आक्रमण:- धर्मपाल की (780-800 ई.) यह अपने शासन का चरमोत्कर्ष का काल था। 800 ई. के आस-पास पुन: राष्ट्रकूट एवं प्रतीहारों के आक्रमण ने धर्मपाल की शक्ति को कमजोर कर दिया। इस पर भी विद्वानों में मतभेद है कि धर्मपाल पर पहले राष्ट्रकूटों ने आक्रमण किया अथवा प्रतीहारों ने। विभिन्न साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि धर्मपाल पर पहले राष्ट्रकूटों ने ही आक्रमण किया था।

M.A. II nd sem

भारत का इतिहास (550 ई. से 1200 ई.)

पालवंश

डॉ. हेमन्त लोदवाल - 4.5.20

~~पालवंश~~

पाल-वंश

हर्ष की मृत्यु के बाद बंगाल में अराजकता फैली हुई थी। कुछ समय पश्चात बंगाल में राजनीतिक चेतना होने तथा अराजकता से बचने के कारणों वश बंगाल की जनता ने गोपाल नामक व्यक्ति को बंगाल का शासक बनाया। गोपाल ही पालवंश का संस्थापक शासक था।

उत्पत्ति - पालों की उत्पत्ति के विषय में बहुत कम जानकारी प्राप्त होती है जब पाल उत्पत्ति के सम्बन्ध में तारानाथ के अनुसार गोपाल की माता क्षत्रिय कुल में उत्पन्न थी और एक वृक्ष देवता के संयोग से उसका गोपाल का जन्म पुण्ड्रवर्धन में हुआ था। पाल अभिलेखों में इनकी उत्पत्ति के बारे कोई उल्लेख नहीं है जब पाल शासक एक शक्तिशाली एवं विस्तृत क्षेत्र के स्वामी बन गये, तो उन्हें क्षत्रिय मान लिया गया। और राष्ट्रकूट तथा हैहय जैसे तत्कालीन शक्तिशाली राजपरिवारों से उनका विवाह सम्बन्ध भी होने लगा।

मूल निवास-स्थान - पालों के मूल निवास-स्थान के विषय में भी निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता, क्योंकि शिलालेखों से इस विषय में कोई जानकारी नहीं मिलती। किन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि पालों का मूलस्थान बंगाल था।

गोपाल (750 ई.-770 ई.) - पाल वंश का प्रथम शासक गोपाल ने लगभग 750 ई. 770 ई. तक शासन किया। गोपाल को बंगाल की जनता ने अराजकता से तंग आकर, शासक बनाया था, गोपाल की सैनिक उपलब्धियों के विषय से विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं है। गोपाल के विषय में इतना कहा जा सकता है कि उसने बंगाल की राजनीतिक अराजकता को खत्म कर एक सुदृढ़ साम्राज्य की स्थापना की।

राष्ट्रकूट शासक गोविन्द III ने 802 ई. में नागभट्ट पर आक्रमण किया था तथा उसे परास्त कर उसने कन्नौज पर आक्रमण किया, किन्तु कन्नौज के शासक धर्मपाल ने गोविन्द III के सामने आत्मसमर्पित कर दिया।

नागभट्ट द्वारा कन्नौज पर अधिकार :- नागभट्ट II के हाथो परास्त होने के पश्चात कन्नौज का शासक चक्रायुद्ध धर्मपाल की शरण में पहुँचा, किन्तु नागभट्ट ने उसका पीछा किया। अतः धर्मपाल एवं नागभट्ट के बीच युद्ध हुआ। इसमें विद्वानो में मतभेद है। यह युद्ध सम्भवतः मुगेंर में हुआ जिसकी पुष्टि बाऊक के जोधपुर के अभिलेख से होती है। इस युद्ध में प्रतिहार शासक नागभट्ट II की विजय हुई।

धर्मपाल एक शक्तिशाली एवं महत्वाकांक्षी शासक था वह विद्वानों का आश्रयदाता भी था। उसकी राजसभा में प्रसिद्ध विद्वान हरिभद्र रहता था। धर्मपाल बौद्ध-धर्म का अनुयायी था। धर्मपाल ने अपने पैतृक रूप में बंगाल का एक छोटा-सा राज्य प्राप्त किया था। किन्तु अपने पराक्रम एवं शौर्य द्वारा वह उत्तर भारत का सबसे शक्तिशाली शासक बन गया।

देवपाल :- (810 ई.-850 ई.) :- धर्मपाल के बाद उसका पुत्र एवं उसका उत्तराधिकारी देवपाल था। देवपाल ने भी अपने पिता के समान महाराजाधिराज, परमभट्टारक एवं परमेश्वर आदि विरुदो उपाधि को धारण की। देवपाल के विषय में मुगेंर, बदल तथा भागलपुर अभिलेखों से ज्ञात होता है कि – देवपाल ने सम्भवतः शिवकर देव अथवा शान्तिकर देव प्रथम के समय में उत्कल पर आक्रमण किया था। देवपाल ने उत्कल को अपने राज्य में मिलाया या नहीं इसके प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

द्रविडो पर विजय :- बदल अभिलेख से ज्ञात होता है कि देवपाल ने द्रविड शासक का घमण्ड चूर किया था। इस पर भी विद्वानो में मतभेद है। ऐसा लगता है कि द्रविड काँची के पल्लव थे। देवपाल ने विन्ध्य, उत्कल एवं द्रविडों पर विजय प्राप्त की अतः बाद्ल

राष्ट्रकूटों को उत्तर पूर्व तथा दक्षिण में अपने क्षेत्र में सीमित रखना था।

गुर्जर-प्रतिहारों से युद्ध ! — सम्भवतः रामभद्र को देवपाल के आक्रमण सहना पड़ा था। यह युद्ध (विवादित) कब हुआ था नहीं विवादास्पद है। ऐसा ज्ञात होता है कि देवपाल ने पहले रामभद्र को पराजित किया किन्तु बाद में रामभद्र ने अपने सामन्तों की सहायता से पालों को परास्त किया।

देवपाल और मिहिरभोज के बीच लम्बा संघर्ष हुआ जिसमें मिहिरभोज के प्रारम्भिक काल में देवपाल की विजय हुई तथा देवपाल के शासन के अन्तिम काल में भोज की विजय हुई।

मूल्यांकन ! — देवपाल भी धर्मपाल के समान बौद्ध धर्मावलम्बी था उसने नालन्दा तथा विक्रमशिला विहारों के विकास में योगदान दिया उसके साम्राज्य का विस्तार कामरूप, पश्चिम में विन्ध्य व मालवा तक व दक्षिण में कलिंग तक फैला था।

पालवंश (850 ई.-988 ई. तक)

देवपाल के बाद पालवंश में अनेक शासक विग्रहपाल (850-854 ई.), नारायणपाल (854-915), राज्यपाल (915-940 ई.), गोपाल II (940-960 ई.), विग्रहपाल II (960-988 ई.), हुए इनके शासनकाल में विशेष उल्लेखनीय घटनाएँ नहीं हुईं। ये पाल वंश के कमजोर कड़ी सिद्ध हुए।

महीपाल (988 ई.-1038 ई.) ; — में विग्रहपाल II का पुत्र एवं उत्तराधिकारी महीपाल I राजगद्दी पर बैठा और उसने अपने खोये हुए गौरव को पुनः स्थापित करने का प्रयास किया। महिपाल के पूर्व राजाओं ने पाल-साम्राज्य के ने जिन प्रदेशों को खो दिया था, उन्हें पुनः प्राप्त किया। यद्यपि चोल एवं सम्भवतः कलचुरि-आक्रमण के कारण वह उत्तर भारत की राजनीति की राजनीति में विशेष रूप से भाग न ले सके। तथा धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में उसका महत्वपूर्ण योगदान है।

पालवंश (1038-1161 ई.)

महिपाल के पश्चात पालवंश में अनेक शासक हुए, किन्तु वे दुर्बल शासक थे - जिनमें नयपाल 1038-1055 ई. शासन किया।

II महिपाल (1070 से 1075 ई)
तृतीय विग्रहपाल ने (1055 ई. - 1070 ई.), ~~विग्रहपाल III 1055~~ -"
रामपाल, अगस्त्य (1075 - 1126 ई), ।

रामपाल की सफलता एक बुझते हुए दीपक की लौ के समान क्षणभंगुर साबित हुई। उसके चार पुत्र थे। वीतपाल और राज्यपाल उसके सबसे बड़े दो पुत्र प्रशासन में उसकी सहायता कर चुके थे। किन्तु वे गद्दी पर कभी नहीं बैठ पाये। यह मालूम नहीं उनका क्या हुआ। रामचरित लिखने वाले लेखक सन्ध्याकर नन्दी ने मदनपाल की प्रशंसा की है लेकिन उसमें सैनिक योग्यता थी या नहीं उसकी चर्चा नहीं की है। उसके समय में पूर्व बंगाल में वर्मन नामान्त राजवंश विक्रमपुर से स्वतंत्र शासन करने लगा था। प्रायः उसी समय पूर्वी बंगाल में सेनवंश अपनी सत्ता स्थापित कर रहा था। जो कालान्तर में पालों को समाप्त कर बंगाल पर सेनवंश ने अधिकार कर लिया।

—x—

M.A. II[nd] Sem

History of India (550 AD - 1200 AD)

Unit - 5 -

Chahamanas ~~(Dr. Hem~~

Dr. Hemant Lochwal (7-5-2020)

राजस्थान के क्षेत्र मे गुर्जर प्रतिहार साम्राज्य के पतन के बाद चाहमान राजवंश का साम्राज्य दिखाई देता है। यद्यपि चाहमान लगभग 7वी शताब्दी से अजमेर के उत्तर में सांभर झील के आसपास का क्षेत्र जिसे शाकम्भरी (सपादलक्ष) कहा जाता था, में राज्य करते थे।

चाहमानो की उत्पत्ति के सम्बंध में अनेक मत प्रचलित है। 12वी शताब्दी के बाद के ग्रंथो मे सूर्यवंशी बताया है। जयानक के ग्रंथ ('पृथ्वीराज विजय') तथा नयचन्द्रसूरि के हम्मीर महाकाव्य (15वी शती) में चाहमानों की उत्पत्ति सूर्य से बताई गयी है। कुछ विद्वान आबू शिलालेख के आधार पर चन्द्रवंशी मानते है। टॉड महोदय विदेशी जाति (सीथियन) से उत्पन्न मानते है डॉ. भण्डारकर का कहना है कि 'खजर' जाति के थे; इनका आधार 'वासुदेव बहमन' की मुद्रा है जिसे वासुदेव चहमन पढ़ा जा सकता है और यही चाहमान वंश का संस्थापक था। इसी प्रकार 'पृथ्वीराज रासो' ने चाहमानो की उत्पत्ति अग्निकुण्ड से मानी गई है।

मूल स्थान :- चाहमानो के मूल स्थान के विषय में भिन्न-भिन्न विवरण मिलते है। पृथ्वीराजविजय में वासुदेव की राजधानी सांभर के पूर्व मे बतायी गयी है। हर्षनाथ अभिलेख में सीकर के निकट, हम्मीर महाकाव्य एवं सूरजनचरित मे चाहमानो की जन्मभूमि 'पुष्कर' मानी है।

उपरोक्त साक्ष्यो के आधार पर कहा जा सकता है कि चाहमानो का राज्य दक्षिण में पुष्कर से लेकर उत्तर में सीकर तक था। इनकी अन्य शाखाऐं रणथम्भौर, नाडोल, एवं जालौर तक फैली थी।

शाकम्भरी के चाहमान (चौहान)

शाकम्भरी के चाहमानो की वंशवली के आधार पर इस शाखा का संस्थापक 'वासुदेव' था। इसने प्रसिद्ध साँभर झील का निर्माण कराया था। राजशेखर ने बताया कि वासुदेव 551 ई. में शासन कर रहा था। बिजोलिया शिलालेख से ज्ञात होता है कि वासुदेव के पश्चात 'सामन्त' अनन्त प्रदेश (सीकर के निकट एवं प्रदेश) का सामन्त था।

सामन्त के बाद उसका पुत्र 'जयराज' अथवा 'अजयराज' प्रथम शासक बना। इसके बाद उसका पुत्र विग्रहराज प्रथम एवं पड़पोता चन्द्रराज प्रथम एवं गोपेन्द्रराज ने शासन किया।

गोपेन्द्रराज के बाद उसका पुत्र दुर्लभराज प्रथम चौहान वंश का शासक बना। ~~यह इसका था~~ इसने प्रतिहार शासक वत्सराज के ~~अधीन~~ अधीन सामन्त रूप में शासन किया। जब प्रतिहार नरेश वत्सराज ने गौड़ नरेश धर्मपाल से युद्ध किया तब सामन्त दुर्लभराज ने ~~उसने~~ सहायता कर विजय दिलायी। दुर्लभराज की मृत्यु के बाद उसका पुत्र गूवक शासक बना। यह प्रतिहार नरेश नागभट्ट II के अधीन था। सम्भवतः गूवक ने अपनी बहिन कलावती का विवाह नागभट्ट II के साथ किया था तथा सिन्ध के मुस्लिम गवर्नर बशर ने प्रतिहार साम्राज्य के पश्चिमी भाग पर (आक्रमण) किया परन्तु नागभट्ट II ने अपने सामन्त गोविन्दराज (गूवक) की सहायता से उसे पराजित कर दिया।

गोविन्दराज प्रथम के बाद उसके पुत्र चन्द्रराज II और पौत्र गूवक II ने क्रमशः राज्य किया। गूवक II के बाद चन्दन शासक बना। इस काल तक दिल्ली के तोमर से शत्रुता बढ़ गई थी। चन्दन ने तोमर शासक रुद्रेन से युद्ध किया एवं उसे मार दिया। चन्दन के पश्चात वाक्पतिराज प्रथम शासक बना। यह शैव धर्मावलम्बी था ~~अतः~~ इसने पुष्कर में शिवमंदिर का निर्माण कराया था।

वाक्पतिराज प्रथम के पश्चात उसका पुत्र सिंहराज सिंहासन पर बैठा यह प्रतापी शासक था जिसके नाम के साथ महाराजाधिराज की उपाधि मिलती है। 973 ई. के हर्षनाथ अभिलेख से ज्ञात होता है कि सिंहराज ने तोमर नायक सलवन को पराजित कर एवं राजकुमारों और सामन्तों को बन्दी बना लिया। तथा हर्षनाथ मन्दिर को ग्राम दान में दिये। सिंहराज की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र विग्रहराज शासक बना यह पराक्रमी शासक था इसने गुजरात के चालुक्य नरेश मूलराज के राज्य पर आक्रमण कर उसे परास्त किया, इसके फलस्वरूप मूलराज को सन्धि करनी पड़ी। विग्रहराज II ने नर्मदा नदी के तट पर भृगुकच्छ (भड़ौच) में एक आशापुरी देवी का मन्दिर बनवाया था।

विग्रहराज II के बाद उसका छोटा भाई दुर्लभराज राजा बना। दुर्लभराज II ने नाडोल राज्य पर आक्रमण किया जहाँ चाहमान वंश की दूसरी शाखा के राजा महेन्द्र का शासन था को पराजित कर दिया। इसका साम्राज्य उत्तर में सीकर से लेकर दक्षिण में अजमेर तक, तथा पूर्व में जयपुर से पश्चिम में जोधपुर तक फैल गया था। दुर्लभराज II के बाद उसका पुत्र गोविन्दराज III शासक बना। पृथ्वीराजविजय ने इसे शत्रुओं का मर्दन करने वाला कहा है। राजशेखर ने प्रबन्धकोश में इसे सुलतान महमूद का विजेता कहा है। इसकी पुष्टि फरिश्ता भी करता है, जिसके अनुसार महमूद को सिन्ध के रास्ते गजनी जाना पड़ा, क्योंकि अजमेर के शासक ने अपनी सेना से मारवाड़ का मार्ग रोक दिया था।

गोविन्दराज III की मृत्यु के बाद वाक्पतिराज II एवं वीर्यराम ने शासन किया। यह वीर्यराम नाडोल शाखा के शासक अणहिल्ल द्वारा किये गये आक्रमण में पराजित हुआ। मालवा में भोज का शासन था। भोज ने आक्रमण कर वीर्यराम को मार दिया।

वीर्यराम के पश्चात् चामुण्डराज, सिंहघाट और दुर्लभराज III ने क्रमशः राज्य किया। दुर्लभराज III म्लेच्छों से युद्ध करता हुआ मारा गया। इसके बाद वीर सिंह और विग्रहराज III चाहमान वंश के शासक बने।

विग्रहराज III को वीसल नाम से भी जाना जाता है। पृथ्वीराज विजय से ज्ञात होता है कि गुजरात के चालुक्य राजा कर्ण ने मालवा पर आक्रमण किया तब वहाँ परमार उदयादित्य था और उसकी सहायता विग्रहराज III ने की थी। इस युद्ध में कर्ण की हार हुई थी। इससे स्पष्ट है कि परमार और चाहमानों के बीच मित्रता थी। नरपतिनाल्ह द्वारा रचित काव्य 'बीसलदेरासो' में विग्रहराज III की रानी राजदेवी मालवा के राजा की पुत्री थी। दोनों राजवंशों के बीच वैवाहिक सम्बंध के कारण ही विग्रहपाल III की सहायता से कर्ण को पराजित किया था।

विग्रहराज III के बाद उसका पुत्र पृथ्वीराज प्रथम शासक बना। इसका शिलालेख (1105 ई) सीकर जिले के रेवासा ग्राम के निकट जीणमाता मन्दिर से प्राप्त हुआ है। इसमें इसकी उपाधि "परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर" अंकित है। स्पष्ट है पूर्व के राजाओं से अधिक

प्रतिभाशाली शासक था। 'पृथ्वीराजविजय' में विवरण है कि इसने पुष्कर में ब्राह्मणों को लूटने वाले चालुक्यों को मौत के घाट उतारा। इसी प्रकार विग्रहराज द्वारा अपने राज्य में प्रवेश करने वाले सोलंकियों (चालुक्य) की सेना को पराजित कर दण्ड देने का उल्लेख मिलता है। यह शासक शैव धर्मावलम्बी था, लेकिन विजयसिंह सूरी कृत "उपदेश मालावृत्ति" तथा चन्द्रसूरी का 'मुनिसुव्रतचरित' नामक जैन ग्रंथो मे कहा गया है कि इसने रणथम्भौर के जैन मन्दिरों पर कनक कलशों की स्थापना की।

अजयराज (1105-1133ई) :- पृथ्वीराज प्रथम की मृत्यु के बाद उसका पुत्र अजयराज शासक बना। इसे 'अजयदेव' एवं 'सल्हण' नामों से भी जाना जाता है।

परमारों से युद्ध :- 'चौहान प्रशस्ति' से ज्ञात होता है कि अजयराज ने मालवा के परमार शासक नरवर्मन को पराजित किया।

तुर्कों से युद्ध :- 'पृथ्वीराजविजय' में अजयराज द्वारा गर्जन मातगों पर विजय का उल्लेख है। यहाँ इसका तात्पर्य गर्जन - गजनी मातगों - मुसलमानों का अर्थ है। तबकात-ए-नासिरी एवं तारीख-ए-फरिश्ता से ज्ञात होता है कि गजनी के शासकों ने पूर्व में जीते भारतीय क्षेत्र तथा नये क्षेत्रों की विजय के लिए सूबेदारों को नागौर पर अधिकार कर उनकी किलेबन्दी का आदेश दिया। अजयराज ने इन सूबेदारों को अपनी सीमाओं में रहने के लिए बाध्य किया।

चाहमान शासक अजयराज ने अपने नाम के आधार पर अजमेर नगर बसाया था और इसे अपनी राजधानी बनाया तथा अनेक मन्दिरों का निर्माण कराया।

अजयराज के द्वारा चाँदी एवं ताम्बे के सिक्के चलाये। उनके अग्रभाग में पद्मासना देवी का अंकन करवाया था। मेनाल शिलालेख (1168 ई) तथा बोड़ स्तम्भलेख (1171 ई) मे मुद्राओं का वर्णन किया गया है। अजयराज ने अपनी रानी सोमलदेवी के नाम से भी मुद्राएँ चलाई थी। इनके अग्रभाग पर अश्वारोही की आकृति और पृष्ठभाग पर रानी का नाम उत्कीर्ण किया है। चाँदी की मुद्राएँ कम मिली हैं इन्हें जनभाषा में गधैया सिक्के कहा जाता है।

अजयराज स्वयं शैव धर्म का अनुयायी होने के साथ ही उसने जैन मन्दिर का निर्माण करवाया तथा पार्श्वनाथ मन्दिर पर स्वर्ण कलश स्थापित किया। अन्त में अजयराज ने अपने पुत्र अर्णोराज को शासक बनाया।

जय सिंह के बाद उसका दत्तक पुत्र 'चाहड़' गद्दी का प्रत्याशी था जो कुमारपाल का प्रतिद्वन्द्वी था इसमें अर्णोराज ने चाहड़ का साथ दिया। और कुमारपाल से युद्ध करने के लिये आगे बढ़ा लेकिन आबू पर्वत के निकट कुमारपाल से पराजित हुआ। लेकिन यह युद्ध निर्णायक नहीं था। तीन चार वर्ष बाद अर्णोराज पुनः गुजरात की ओर बढ़ा। साथ ही अर्णोराज ने मालवा के बल्लाल को भी अपने पक्ष में युद्ध करने को तैयार कर लिया।

कुमारपाल ने अपने सामन्त सेना की एक टुकड़ी बल्लाल के विरुद्ध भेज दी। ताकि दोनो मिल न सके और स्वयं अर्णोराज की ओर आगे बढ़ा चाहड़ को बन्दी बना लिया अर्णोराज तीर से घायल हो गया उसे भी बन्दी बना लिया। दोनो के बिच सन्धि हुई। इसके अन्तर्गत अर्णोराज ने अपनी पुत्री जल्हण का विवाह कुमारपाल से कर दिया। इस युद्ध में चौहान पराजित अवश्य हुए लेकिन उनकी शक्ति बची रही। इस युद्ध के बाद अर्णोराज की ~~मृत्यु हो गई~~। उसकी मारवाड़ी रानी सुधावा के बड़े पुत्र जगद्देव ने उसकी हत्या कर दी अर्णोराज के इस रानी से दो पुत्र थे - <u>विग्रहराज</u> एव <u>देवदत्त</u>। चालुक्य वंशी रानी कांचनदेवी से एक पुत्र सोमेश्वर था। अर्णोराज की हत्या के बाद उसका बड़ा पुत्र, पितृहन्ता जगद्देव शासक बना। जगद्देव के विरुद्ध विद्रोह हुए जिनका नेतृत्व उसके छोटे भाई विग्रहराज ने किया कुछ समय बाद विग्रहराज ने जगद्देव की हत्या कर स्वयं शासक बन गया।

<u>विग्रहराज IV (1153-1164 ई)</u> :-

विग्रहराज लगभग 1153 ई. में अजमेर का शासक बना इसके 11 शिलालेख प्राप्त है, एक अजमेर स्थित "ढाई दिन का झोंपड़ा" (सरस्वती मन्दिर) भी है

<u>नाडोल, पाली, एवं जालौर पर आक्रमण</u> :- अर्णोराज - कुमारपाल युद्ध के समय नाडोल, पाली एव जालौर के शासको ने कुमारपाल की सहायता की थी। यद्यपि पूर्व में तीनो राज्य अर्णोराज के समर्थक थे। लेकिन जब कुमारपाल अर्णोराज से युद्ध के लिए आबू की ओर आ रहा था, तब कुमारपाल ने पाली, जालौर एवं नाडोल पर आक्रमण कर अपने समर्थकों को शासक बना कर आगे बढ़ा अर्णोराज से युद्ध किया। अब विग्रहराज IV ने तीनो राज्यो पर आक्रमण कर पराजित किया।

अर्णोराज (1133 -1153ई.) :- अजयराज ने 1133ई. में अपने पुत्र अर्णोराज को गद्दी पर बैठाकर सन्यास ग्रहण किया। इसकी माता का नाम सोमल्ल देवी था। अर्णोराज को अनलदेव, आनलदेव, अनाक एवं अन्ना नाम से भी जाना जाता था।

तुर्कों पर विजय :- अर्णोराज के समय तुर्कों ने नागौर को केन्द्र बनाकर उसके आसपास के क्षेत्र पर आक्रमण का अजमेर तक पहुँच गये और अन्नसागर के स्थान पर मैदान में युद्ध हुआ। ये यामिनी वंश के तुर्क थे। इस युद्ध में तुर्क सेनापति पराजित होकर जिसका चौहानो ने पीछा किया और तुर्क सेना के अश्वों को भय जिससे आनेवाले 20 वर्षों तक सपादलक्ष्य की ओर देखने का साहस नही हुआ।

मालवा पर विजय :- बिजोलिया शिलालेख से ज्ञात होता है कि अर्णोराज ने मालवा के परमारवंशी नरवमनि को पराजित किया।

अर्णोराज ने सिन्धु-सरस्वती क्षेत्र के अन्तर्गत पूर्वी पंजाब के कुछ भागों पर अधिकार कर लिया था। 'चौहान प्रशस्ति' से ज्ञात होता है कि अर्णोराज ने हरितानक (हरियाणा) के निकट कालिंदी (यमुना) नदी के आसपास तोमरो का राज्य था। इनकी राजधानी ढिल्लिका (दिल्ली) थी अर्णोराज ने तोमरों को पराजित किया परन्तु यह विजय ज्यादा समय तक नहीं रही।

गुजरात के चालुक्यों से संघर्ष :- जयसिंह सिद्धराज भी साम्राज्यवादी एवं शक्तिशाली शासक था। इसने (चालुक्य) 1121 ई. में नागौर एवं 1143 में मालवा पर अधिकार कर लिया। इससे अर्णोराज की साम्राज्य विस्तार नीति पर अंकुश लग गया। दोनो राज्यो के बीच संघर्ष का यही कारण था। संघर्ष में अर्णोराज पराजित हुआ। जयसिंह सिद्धराज ने मित्रता रखने के लिए अपनी पुत्री कांचन देवी का विवाह अर्णोराज से कर दिया।

जयसिंह के बाद कुमारपाल के 1147 ई. में सिंहासन पर बैठते ही चालुक्य और चाहमान सम्बन्ध भी समाप्त हो गये। संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गयी। हेमचन्द्र कृत द्वयाश्रय महाकाव्य में अर्णोराज को दोषी ठहराया क्योंकि अर्णोराज ने चालुक्य राज्य आन्तरिक राजनीति में हस्तक्षेप किया था जिससे युद्ध की परिस्थितियाँ बनी।

M.A. IInd sem
History of India. (550 AD - 1200 AD)
डॉ. हेमन्त लोढ़वाल
6-5-2020

गाहड़वाल राजवंश

कन्नौज और काशी के गाहड़वाल राजाओं के वंश के बारे में बहुत कम जानकारी प्राप्त होती है। यद्यपि कुछ अभिलेखों में उन्हें क्षत्रिय कहा गया है। समकालिक साहित्य में भी चर्चा निहित है। ऐसी स्थिति में विभिन्न विद्वानों ने गहड़वालों को पालों, राष्ट्रकूटों, कर्नाट चालुक्यों अथवा विन्ध्याचल की पहाड़ियों के आसपास रहने वाले भारत के मूल निवासियों से जोड़ा है जिन्होंने हिन्दू धर्म के प्रभाव में आकर राजकीय कार्य करने लगे और अपने को क्षत्रिय कहना प्रारम्भ कर दिया।

गहड़वाल अथवा गहरवार शब्दों की उत्पत्ति के बारे में भी कोई स्पष्ट जानकारी नहीं मिलती है। मिर्जापुर में स्थित कान्तित का क्षत्रिय कुल अपने को गाहड़वाल मानता है। विश्वास है कि उनका पूर्वपुरुष प्रसिद्ध राजा ययाति (चन्द्रवंशी) का देवदास नामक कोई वंशज था जिसे सत्यपथ पर चलने से शनि ग्रह ने बड़ा प्रयत्न किया। किन्तु वह अपने सत्कर्मों से विचलित नहीं हुआ और उसे ग्रहवार की उपाधि मिली। इसी से आगे गहरवाल अथवा गाहड़वाल शब्द निकला। पुराणों में गह्वर या गिरिगह्वर नामक जाति का वर्णन आता है जो जंगलों और पहाड़ों की कन्दराओं में रहती थी।

गाहड़वाल वंश के संस्थापक चन्द्रदेव ~~~~ था। लेकिन सबसे पहला नाम यशोविग्रह ज्ञात होता है कन्नौज पर राज्यपाल का अधिकार था अतः यशोविग्रह के वंशजों ने उसके बाद ही उस पर अधिकार किया होगा। यशोविग्रह का पुत्र महीचन्द्र अथवा महीतल हुआ। गोविन्दचन्द्र के अभिलेखों में उसे नृप की उपाधि दी गयी है। नृप का अर्थ किसी बड़ी सत्ता का सामन्त ~~~~ होगा।

चन्द्रदेव : (1089 - 1104 ई.) :- महीचन्द्र का पुत्र चन्द्रदेव गाहड़वालों का स्वतंत्र शासक था। उसके चार अभिलेख प्राप्त हुए हैं ये सभी अभिलेख चन्द्रदेव के दान की चर्चा करते हैं

उनसे यह ज्ञात होता है कि काशी अयोध्या जैसे प्रमुख नगरों सहित गंगा और सरयू (घाघरा) नदियों के किनारों के प्रदेश उसके अधिकार में थे। अपने ओर वंशजों के अभिलेखों में वह परमभट्टारक, महाराजाधिराज, परमेश्वर, श्री चन्द्रदेव अथवा चन्द्रादित्यदेव कहा गया है। चन्द्रदेव को (1072-73 ई.) कर्ण की मृत्यु के बाद ही अपनी सत्ता विस्तार का अवसर प्राप्त हुआ। उसने कान्यकुब्ज पर अधिकार कर लिया। वास्तव में उस समय भारत तुर्की आक्रमणों का शिकार हो रहा था इसी का लाभ उठाकर चन्द्रदेव ने काशी (वाराणसी), कान्यकुब्ज, उत्तर कोसल (अयोध्या) एवं इन्द्रप्रस्थ के समीपी क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। चन्द्रावती से प्रकाशित 1093 ई. का अभिलेख में उसे नरपति गजपति, गिरिपति और त्रिशंकुपति पर विजय का श्रेय देता है

<u>मदनपाल- 1104-1114 ई.</u> :- ~~मदनपाल~~ चन्द्रदेव की मृत्यु के बाद मदनपाल ने शासन किया उसके समय के पाँच अभिलेख मिले है। इनमें से तीन अभिलेख उसके पुत्र महाराजपुत्र और युवराज गोविन्दचन्द्र के हैं। चौथे में उसकी रानी पृथ्वीश्रीका के दान का उल्लेख है। अत: उसके पाँचवाँ दानपत्र उसका निजी है जिसमें उसे परमभट्टारक, महाराजाधिराज परमेश्वर की उपाधियाँ दी गयी हैं 1104 के बसही अभिलेख से ज्ञात होता है कि वह इस समय शासन कर रहा था। उसके तुर्क आक्रमणकारियों द्वारा पकड़े जाने के बाद उसे छुड़ाने के लिए महाराजपुत्र गोविन्दचन्द्र को संघर्ष करना पड़ा। 1109 ई. राहन अभिलेख में कहा कि अपने रण कौशल से हम्मीर को शत्रुता त्याग देने को विवश किया था। इसी प्रकार का उल्लेख महा सान्धिविग्रहिक लक्ष्मीधर की कृत्यकल्पतरु में कहा है कि गोविन्दचन्द्र ने हम्मीर वीर को एक असमान युद्ध में मार डाला। किन्तु दोनों उल्लेख दो अवसरों के हैं जिनके विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। पिता मदनपाल के समय गाहड़वाल राज्य की सीमाओं में कोई कमी नहीं हुई।

<u>गोविन्दचन्द्र लगभग (1114-1154 ई.)</u>

मदनपाल के शासनकाल का अन्तिम अभिलेख 1109 ई में प्रकाशित हुआ था और स्वतन्त्र शासक के रूप में गोविन्दचन्द्र का कमौली से प्राप्त अभिलेख वि.स. 1171 - 1114 ई. का ज्ञात है। अत: मदनपाल की मृत्यु तथा उसकी रानी राल्हादेवी से उत्पन्न पुत्र गोविन्दचन्द्र का राज्यारोहण दोनों तिथियों के बीच कभी हुआ होगा। गोविन्दचन्द्र अपने पिता के समय

यवनों और पाल आक्रमणों का सफलतापूर्वक मुकाबला कर चुका था। उसने कन्नौज को एक बार राजनीति का केन्द्र बना दिया। उसके 40-42 अभिलेख पश्चिम बिहार से लेकर पश्चिमी उत्तर प्रदेश तक के विभिन्न स्थानों से प्राप्त हुए हैं। उनमें से अधिकांश बनारस और उसके आसपास के पूर्वी उत्तर प्रदेश से प्राप्त हुए हैं।

गोविन्दचन्द्र ने दो नीति अपनाई पश्चिम में तो उसने तुर्क आक्रमणों का रक्षात्मक नीति का पालन किया। किन्तु पूर्व, दक्षिण और उत्तर की अलग नीति ~~विजय~~ अधिकार करने की थी, जिसका उद्देश्य साम्राज्य की सीमा का विस्तार करना था।

सरयूपार की विजय :- ~~गोविन्दचन्द्र~~

गोविन्दचन्द्र की विजयों का कोई तिथिक्रम नहीं है परन्तु अभिलेखों के आधार पर विस्तार क्षेत्र जान सकते हैं। चन्द्रदेव और मदनपाल के समय गहड़वाल क्षेत्रों का विस्तार वाराणसी के उत्तर, अयोध्या होते हुए, पूर्वी उत्तर प्रदेश के क्षेत्रों तक सीमित था। जो घाघरा नदी के दक्षिणी किनारे पर पड़ते हैं। गोरखपुर जिले से प्राप्त एक अन्य अभिलेख में कीर्तिपाल को ~~दरदगण्डकीदेश~~ दरदगण्डकीदेश का शासक बताया गया है। उसके कुछ सिक्के मिले हैं उनसे उनके वंश के बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती है। न ही कोई अभिलेख प्राप्त हो। सम्भव है कि गोविन्दचन्द्र 1111 ई और 1114 ई के बीच कभी उसे पराजित कर पूर्वोत्तर में अपनी सीमा बढ़ी गण्डक नदी तक बढ़ा ली हो। उसके 1146 ई के लार अभिलेख से ज्ञात होता है कि उसने सरयूपार के क्षेत्रों के ब्राह्मणों को भूमिदान दिया था।

पश्चिमी और मध्य बिहार पर अधिकार :-

पूर्व में पाल सत्ता समाप्त हो रही थी। अतः एक तरफ सेन शासक विजयसेन और गोविन्दचन्द्र पाल क्षेत्रों पर अधिकार करना चाहते थे। गोविन्दचन्द्र का संघर्ष पालों से संघर्ष रामपाल के समय से प्रारम्भ हो गया था। उसका समकालिक रामपाल था, और उसने सत्ता को बचाने का प्रयास किया लेकिन वह बचा न सका। पटना-दानापुर क्षेत्र के मनेर नामक गाँव से प्राप्त (1124 ई) अभिलेख में गणेश्वर शर्मा (पटना जिले के पश्चिमी भाग) को दान दिया। देवरिया से प्राप्त अभिलेख (1146 ई) में ओथा नामक ब्राह्मण को दान देने का उल्लेख है। इससे लगता है कि रामपाल का क्षेत्र उसने जीत लिया होगा।

गोविन्दचन्द्र की मुंगेर के आसपास के क्षेत्रों की विजय स्थायी नहीं रही और मदनपाल ने उन्हें पुनः अधिकार कर लिया यह सम्भव नहीं कि गोविन्दचन्द्र की मृत्यु के बाद गहड़वालों के हाथों से निकलकर पालों के अधिकार में गये हों।

कलचुरियों पर विजय

कलचुरि साम्राज्य के कमजोर उत्तराधिकारियों के कारण गहड़वाल साम्राज्य का निर्माण हुआ। चन्द्रदेव के बाद गोविन्दचन्द्र ने कलचुरियों के राज्यों पर अधिकार करना जारी रखा तथा इसके एक अभिलेख में बताया है कि इसने अन्तराल पत्तला के करण्ड और करण्डतल्ल नामक दो गाँव वसिष्ठ नामक ब्राह्मण को दान दिया। ये दोनों गाँव यशःकर्ण के द्वारा राजगुरु रुद्रशिव को दान दिये थे। इससे स्पष्ट है कि उन गाँवों से कलचुरि अधिकार समाप्त कर गोविन्दचन्द्र ने दान के माध्यम से नयी व्यवस्था की और उसके अभिलेखों में अश्वपति नरपति, गजपति राज्यत्रयाधिपति की उपाधि धारण की। यही नहीं गोविन्दचन्द्र ने कर्ण की भांति बैठी हुई लक्ष्मी शैली सिक्के सोने चांदी तांबे के चलाये था। इसके पहले गहड़वाल सिक्के तांबे और मिश्रित धातुओं के होते थे। उनकी शैली वृषभ-अश्वारोही प्रकार के थे।

दशार्ण देश की विजय! -

जयचन्द्र नाटक रम्भामञ्जरी में दशार्ण अर्थात पूर्वी मालवा भी अधिकार में आ गया था। उसी समय उसे पुत्र के पुत्र की जन्म की सूचना मिली तो उसने प्रसन्न होकर जयचन्द्र नाम दिया। दशार्ण परमारों का राज्य था। जिसके नरवर्मा और यशोवर्मा ने इनकी कमजोरी का लाभ उठाकर उनके क्षेत्रों पर कब्जा किया किन्तु पूर्वी मालवा पर आक्रमण करने के पहले उसे चन्देल राज्य को पार करना आवश्यक था। उसके समकालिक चन्देल राजा जयवर्मा, पृथ्वीवर्मा, मदनवर्मा थे। और उसे मदनवर्मा से संघर्ष करना पड़ा होगा। उन दोनों के संघर्ष के अनेक प्रमाण मिलते है गोविन्दचन्द्र के चन्देलों और परमारों के विरुद्ध अभियान का समय निश्चित नहीं किया जा सका।

गोविन्दचन्द्र के विषय में मेरुतुंग कृत प्रबन्धचिन्तामणि में लिखा है कि अणहिलवाड़ के चालुक्य राजा जयसिंह सिद्धराज ने काशी के राजा जयचन्द्र के दरबार में एक दूत भेजा था। किन्तु जयसिंह के समकालीन राजा जयचन्द्र न होकर गोविन्दचन्द्र रहा होगा। यह मित्रता कुमारपाल के समय तक चलती रही। कुमारपाल ने जीवहिंसा बन्द कराने के लिये अपने दूत को काशी भेजा था। गोविन्दचन्द्र ने कश्मीर के राजा के पास दूत भेजा था।

दिल्ली पर अपना अधिकार कर लिया। ये दोनो ही स्थान तोमरो के अधिकार में थे जिसे चाहमानो ने अपने सामन्त के रूप में शासन करने दिया।

जयचन्द्र (1170-1194 ई.)

विजयचन्द्र का चन्द्रलेखादेवी से उत्पन्न पुत्र जयचन्द्र राजगद्दी पर बैठा। वह अपने पिता के समय से ही प्रशासन का कार्य देख रहा था। और उसने पिता के समय भी दान पत्र लिखवाया था। लेकिन उसके समय की राजनीतिक स्थिति के बारे में कम जानकारी प्राप्त होती है पृथ्वीराज के 1183-84 ई. के मदनपुर अभिलेख से चाहमानो का परमर्दि के राज्य पर आक्रमण का उसके कुछ भागों पर चाहमानो का अधिकार हो गया अतः चाहमान - चन्देल संघर्षों में उसकी कोई चर्चा नहीं है हो सकता है कि जयचन्द ने परमर्दिन की सहायता की हो। क्योंकि परमर्दिन का पिता मदनवर्मा गोविन्दचन्द्र अथवा उसके पुत्र विजयचन्द्र का मित्र रह चुका था। और चाहमानो ने गहड़वाल को हराकर अपना अधिकार कर लेने के कारण जयचन्द के मन में कड़वाहट घर कर गयी थी।

पूर्व दिशा में सेनवंशी राजा लक्ष्मणसेन जयचन्द का प्रतिद्वन्दी था। उन दोनो के बीच युद्ध के अनिर्णायक होने की सूचना प्राप्त होती है। जयचन्द का बोधगया से प्राप्त 1183 और 1192 ई. के बीच का एक अभिलेख गया तक उसके अधिकार की बात करता है वहीं लक्ष्मणसेन और उसके पुत्र विश्वरूपसेन के अभिलेख में वे काशीराज को हराकर बनारस तथा प्रयाग में विजयस्तम्भो की स्थापना की बात करता है यह विजय सम्भवतः जयचन्द के शिहाबुद्दीन गोरी से हार जाने तथा मारे जाने के बाद हुई थी न कि उसके समय में। अतः जयचन्द के समय पूर्वी सीमा में कोई बदलाव नहीं हुआ।

पश्चिमोत्तर देश क्षेत्र जयचन्द्र के सीमावर्ती क्षेत्र था जिसकी सीमा चाहमानो से लगी थी। पृथ्वीराजरासो में जयचन्द्र की दिग्विजय तथा राजसूय यज्ञ और संयोगिता स्वयंवर की चर्चा है मुस्लिम आक्रमण में पृथ्वीराज के मारे जाने पर जयचन्द्र ने दीवाली मनायी।

गोविन्दचन्द्र के समय कन्नौज का राजदरबार हर्षवर्धन और महेन्द्रपाल प्रतिहार के समय की ही तरह पुनः एकबार विद्या, संस्कृति और साहित्य का केन्द्र हो गया। वह स्वयं अपने अभिलेखों में विविध विद्या विचार वाचस्पति कहा गया है। हो सकता है गोविन्दचन्द्र ने स्वयं भी कुछ कविताएँ लिखा हो। किन्तु उनकी अथवा उनके राजदरबार के अन्य कवियों की कृतियों की कोई जानकारी हमें नहीं मिलती है।

विजयचन्द्र (1155-1169 ई॰)

गोविन्दचन्द्र के तीन पुत्र थे, जिसमें जेठा आस्फोटचन्द्रदेव था। 1134 ई॰ के अभिलेख में युवराज कहा है। उससे छोटा— 1152 ई॰ राज्यपालदेव जानकारी अभिलेख में मिलती है तथा उनकी अकाल मृत्यु हो जाने से विजयचन्द्र गोविन्दचन्द्र का उत्तराधिकारी हुआ। साहित्यों में इसे विजयपाल और मल्लदेव भी कहा गया है। इसके केवल चार अभिलेख प्राप्त हुए है। 1168 ई॰ के अभिलेख के अनुसार पता चलता है कि विजयचन्द्र के समय गहड़वालों की अवनति प्रारम्भ हो गयी।

पृथ्वीराज रासो मे चन्दबरदाई का कथन है कि विजयचन्द्र ने कटक के सोमवंशी राजा मुकुन्ददेव को हराया, जिसे अपनी पुत्री का ब्याह जयचन्द्र से करना पड़ा। उसने दिल्ली, अन्हिलवाड़ के भोला भीम को हराया। तथा विन्ध्याचल के पार दक्षिण के अनेक देशों पर आक्रमण किया किन्तु यह सही नहीं है क्योंकि चन्दबरदाई जिन राजाओं का उल्लेख करता है वे इसके समकालीन नहीं थे।

विजयचन्द्र के पुत्र जयचन्द्र के बनारस से प्राप्त 1168 ई॰ के कमौली अभिलेख में कहा है कि उसने ~~पृथ्वी का~~ हम्मीर के आहत को खुशरूशाह (1150-1160 ई॰) अथवा खुशरूमलिक (1160-1186 ई॰) को पराजित कर दिया। ~~चाह~~ मुसलीम साक्ष्यों ने ऐसा कोई उल्लेख नहीं किया किन्तु चाहमान अभिलेख में कहा कि विजयचन्द्र के समकालीन राजा विग्रहराज IV (चाहमान) बीसलदेव भी म्लेच्छ आक्रमणों का प्रतिरोध किया था। किन्तु यह आक्रमण कब हुआ साक्ष्य उपलब्ध नहीं है।

विजयचन्द्र का अधिकार काशी, सहसराम पर अधिकार है किन्तु विजयचन्द्र के समय पश्चिम में गहड़वालों का प्रभाव कम हो गया। दिल्ली के तोमरवंशी शासक गहड़वालों की अधीनता चन्द्रदेव के समय स्वीकार करते थे "कि अब शाकम्भरी चाहमान राजा विग्रहराज के

शिहाबुद्दीन गोरी का आक्रमण (1193-94 ई.) और गहड़वाल राज्य का अन्त

12वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में उत्तर भारत के चार राज्य गहड़वाल, चाहमान, सोलंकी और चन्देल - जब आपस में लड़ रहे थे तब मुहम्मद गोरी के नेतृत्व में नये अध्याय का सूत्रपात हो रहा था। क्रमशः उसने गजनी 1173 ई., मुल्तान 1175 ई., पेशावर 1179 ई. और लाहौर 1187 ई. पर अधिकार कर लिया। 1178 ई. में चौलुक्य राज पर आक्रमण किया तो वहाँ भीमदेव ने काशहृद के मैदान में उन्हें करारी मात दी। उस समय उसकी चाहमान और गहड़वाल राजाओं ने सहायता नहीं कि। जबकि बाहरी आक्रमण के समय तीनों राज्यों के पास एक अच्छा विकल्प था एक सूत्र योजना लेकिन ऐसा नहीं हो पाया। किन्तु असली अवसर के आने पर आक्रमणों के समक्ष वह अकेला पड़ गया। तराइन का दूसरा युद्ध 1192 ई. में लड़ा उसमें मारा गया।

तराइन की सफलता के बाद गोरी की सेना सामान्य मेरठ, दिल्ली (1193 ई.) और आगे तक अपना अधिकार क्षेत्र बढ़ाने लगे तब गहड़वाल सेना को पराजित हुए होंगे। 1194 ई. में गोरी ने आक्रमण किया उसका तीर जयचन्द की आखों में लगा वह नीचे गीर गया अंततः मारा गया। और उसकी सेना पराजित हो गई। इसके बाद गोरी कन्नौज, फतेहपुर, बनारस, को लूट मन्दिरों को तोड़ तथा मस्जिदों का निर्माण करवा दिया। इस प्रकार हिन्दुओं का अन्तिम गढ़ (गहड़वाल) भी ढह गया।

—x—

M.A. IInd sem

भारत का इतिहास (550 ई. 1200 ई. तक)

डॉ. हेमन्त लोदवाल - 5-5-20

यूनिट - 5 विषय :- सेन राजवंश

सेनवंशी शासकों के पूर्व पुरुषों के मूल स्थान और उत्पत्ति सम्बन्धी उल्लेख विजयसेन के देवपाड़ा अभिलेख एवं लक्ष्मणसेन के माधाइनगर अभिलेख में मिलते है। तदनुसार, वे चन्द्रवंशी थे और उनका प्रारम्भिक पुरुष वीरसेन था, जिस कुल में सामन्तसेन उत्पन्न हुआ। देवपाड़ा अभिलेख के आठवें श्लोक से ज्ञात होता है कि सेनवंश के पूर्व पुरुष मूलत: कर्णाट (आधुनिक पश्चिमी आन्ध्र प्रदेश और मैसूर के उत्तर भाग) के निवासी थे। और वे स्वयं को ब्राह्मण और क्षत्रिय दोनों ही मानते थे।

सेन लोग कर्णाट देश से कब और कैसे आये, इसकी जानकारी प्राप्त नहि होती। देवपाड़ा अभिलेख में सामन्तसेन के प्रारम्भिक सैन्य कार्यों का क्षेत्र दक्षिण था, किन्तु वृद्धावस्था में उसने उत्तर में गंगा नदी के किनारों के वन्य प्रदेशों में स्थित तीर्थों का भ्रमण किया। किन्तु ~~वल्लाल~~ वल्लालसेन के नैहटी अभिलेख राढ़ा के उत्तरी भागों में एक छोटा सा क्षेत्र अधिकृत कर लिया। उसके प्रयत्नों से उसके पुत्र हेमन्तसेन ने राजसत्ता का उपभोग किया।

विजयसेन -(1095 -1158 ई.)

हेमन्तसेन के बाद रानी यशोदेवी से उत्पन्न उसका विजयसेन नामक पुत्र गद्दी पर बैठा। दक्षिण राढ़ा में स्थापित शूरवंश की एक राजकुमारी (विलासदेवी) से विवाह कर उसने अपनी सत्ता के विस्तार का प्रयत्न किया। देवपाड़ा, बैरकपुर और पैकोर नामक स्थानों से तीन अभिलेख प्राप्त हुए हैं। रामपाल की मृत्यु के बाद पालों की अवनति का विजयसेन ने अपनी सत्ता पूर्व बंगाल और उत्तरी बंगाल के बड़े भाग पर स्थापित कर ली।

गौड़राज पर विजयसेन की विजय को सर्वाधिक महत्व दिया देवपाड़ा अभिलेख में ~~गौड़राज~~ कहा गया है कि गौड़राज भयभीत होकर भाग जाने वाला कहा गया है और वह शासक पाल मदनपाल था। उत्तरी बंगाल में पालसत्ता कमजोर होने लगी और सेन सत्ता स्थापित होने लगी। विजयसेन ने वहीं के पद्मसर नामक तालाब के किनारे प्रद्युम्नेश्वर शिवमन्दिर बनवाया उसने परमेश्वर, परमभट्टारक, महाराजाधिराज एवं अरिराजवृषभशंकर जैसी उपाधियाँ धारण की थी।

बख्तियार खलजी का आक्रमण :- 1193 ई. में मगध के बिहार नामक नगर को ध्वस्त कर बख्तियार खलजी जब कुतुबुद्दीन ऐबक के सम्मुख उपस्थित हुआ तो अगला आदेश लखनौती भी जीतने की आज्ञा मिली। मिनहाजुद्दीन ने अपने तबकाते-नासिरी में बख्तियार लखनौती विजय का जो विवरण दिया है उसमें कितनी सत्यता थी कहा जाता है कि बख्तियार ने इतनी तेजी से सेन राज्य पर आक्रमण किया कि उसकी सेना का मुख्य भाग बहुत पीछे छूट गया और लक्ष्मणसेन की राजधानी नदियाँ पहुँचते-पहुँचते केवल 18 घुड़सवार उसके साथ रह गये। और वह राजदरबार में घुस गया [illegible] उल्लेख किया है [illegible] सेन राजदरबार में तुर्कों के नाम से भयभीत हो गये। लक्ष्मणसेन की तुर्क आक्रमण से दुर्गति तो हुई, किन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से उसका समय महत्वपूर्ण था।

मिनहाजुद्दीन उसे बंगाल का बड़ा राजा कहता है और वह कहता है कि लक्ष्मणसेन दानशीलता के लिए प्रसिद्ध था। राजशेखर अपने प्रबन्धकोश में लक्ष्मणसेन की प्रशंसा में कहता है कि वह बड़ा प्रतापी और न्यायी था तथा उसके पास विपुल राज्य और विद्वान (गी.गो.) जयदेव, पवनदूत (धोयी), ब्राह्मण सर्वस्व (हलायुध) और श्रीधरदास जैसे साहित्यकार उसके समय दरबार की शोभा बढ़ाते थे।

लक्ष्मणसेन के उत्तराधिकारी :- नदिया पर 1202 ई. में बख्तियार खलजी के आक्रमण के साथ लक्ष्मणसेन अथवा सेनवंश की समाप्ति नहीं हो पायी थी। उसके बाद भी लम्बे समय तक शासन करते रहे। लक्ष्मणसेन की मृत्यु 1205 ई. में हुई। उसके बाद उसके दो पुत्रों ने शासन किया। जिनमें विश्वरूपसेन और केशवसेन ने दक्षिण और पूर्वी बंगाल पर लगभग 20-25 वर्षों तक शासन किया, जहाँ से उनके तीन अभिलेख प्राप्त हुए हैं। इन अभिलेखों में इन्हें साम्राज्यसूचक विरुद दिये हैं। उनकी उपलब्धी की जानकारी नहीं मिलती है। मिनहाजुद्दीन कहता है कि 1260 ई. में जब तबकाते-नासिरी की रचना पूर्ण की तब भी लक्ष्मणसेन के वंशजों का शासन उन प्रदेशों पर स्थापित था।

वल्लालसेन (1159-1179 ई.) :- सन 1958-59 ई. में विजयसेन की मृत्यु हो गयी और विलासदेवी से उत्पन्न बल्लालसेन पुत्र राज्य का उत्तराधिकारी बना। उसके नैहट्टी अभिलेख में उसके 11 वर्ष शासन करने का उल्लेख मिलता है। बल्लालसेन की सैनिक विजय की जानकारी प्राप्त नहीं होती। उसने गोविन्दपाल को 1162 ई. के आसपास हराकर बिहार पर अधिकार कर लिया। और गौडेश्वर की उपाधि धारण की। माधाइनगर अभिलेख में बताया कि बल्लालसेन ने चालुक्य राजा जगदेकमल्ल II की पुत्री रामदेवी से विवाह किया। बल्लालचरित में उसके राज्य क्षेत्र के वंग, वरेन्द्र, राढ़, बागडि और मिथिला आदि थे। उसने अपने पिता की भांति परममाहेश्वर, परमभट्टारक, महाराजाधिराज, अरिराज निःशंक शंकर की उपाधियाँ धारण की। वह शैव धर्म को मानने वाला था उसने दानसागर और अद्भुत सागर नामक ग्रंथो की रचना की। वह एक साहित्यकार भी था।

लक्ष्मणसेन - (1179-1205 ई.)

वल्लालसेन ने अपने जीवन के अंतिम वर्षों में गद्दी को त्यागकर रानी रामदेवी से उत्पन्न लक्ष्मणसेन को राज्याभिषेक कर दिया। उसके शासन काल के आठ अभिलेख बंगाल से प्राप्त हुए हैं, जिनमें उसकी विजयों और सांस्कृतिक क्रियाकलापों की जानकारी प्राप्त होती है। उसने अरिराजमर्दनशंकर और गौडेश्वर की उपाधियाँ धारण की तथा उसने शैवधर्म को त्यागकर वैष्णव धर्म को अपना लिया। इसलिए परमवैष्णव की उपाधि भी दी गयी है।

लक्ष्मणसेन की विजयें उसके पुत्र विश्वरूपसेन के मदनपाड़ा अभिलेख में एक लम्बी विरुदों की सूची है साथ ही उसे पुरी (भुवनेश्वर) काशी, त्रिवेणी संगम अर्थात प्रयाग में विजयस्तम्भों की स्थापना की। इससे स्पष्ट होता है लक्ष्मणसेन महान विजेता था। क्योंकि उसके प्रारम्भिक अभिलेखों में गौड, वंग और राढ़ पर उसके अधिकार की पुष्टि होती है माधाइनगर अभिलेख में उसने गौड, कामरूप, काशी, और कलिंग की विजय की। लक्ष्मणसेन का समकालिक शासक जयचन्द था इन दोनों के अभियानिक संघर्ष की पुष्टि राजशेखर कृत प्रबन्धकोश में बताया है कि जयचन्द ने लक्ष्मणसेन के राज्य पर आक्रमण किया किन्तु उसका कोई परिणाम नहीं निकला। स्वयं लक्ष्मणसेन के विजयसम्बन्धी उल्लेखों में कोई वर्णन नहीं मिलता।